ब्रह्मचारी के धर्म अथवा कर्तव्य

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

ब्रह्मचारी को ईप्सित दण्ड को ग्रहण करके, फिर सूर्य के सम्मुख स्थित होकर अग्नि की प्रदक्षिणा करके विधिपूर्वक भिक्षावृत्ति करनी चाहिए-

प्रतिगृह्येप्सितं दण्डमुपस्थाप्य च भास्करम्।

प्रदक्षिणं परीत्याग्निं चरेद्भैक्षं यथाविधिः।।

अपने प्रयोजन तक वह भिक्षा लाकर कपट को छोड़कर आचार्य को अर्पण कर और पवित्र हो पूर्व की ओर मुख कर आचमन कर उसे भोजन करना चाहिए-

समाहृत्य तु तद्भैक्षं यावदन्नममायया।

निवेद्य गुरवेऽश्नीयादाचम्य प्राङ्मुखः शुचि।।

पूर्व की ओर मुखकर जो भोजन करता है उसको दीर्घायु की प्राप्ति होती है। दक्षिण को मुख करके भोजन करने वाला यश को प्राप्त होता है। पश्चिम की ओर मुखकर के भोजन करने वाला लक्ष्मी को प्राप्त होता है। उत्तर को मुखकर के भोजन करने वाला सत्य के फल स्वर्गादि को प्राप्त होता है-

आयुष्यं प्राङ्मुखो भुङ्क्ते यशस्यं दक्षिणामुखः।

श्रियं प्रत्यङ्मुखो भुङ्क्ते ऋतं भुङ्क्ते ह्युदङ्मुखः।।

समाहित होकर द्विजवर्ग के विद्यार्थियों को सदा आचमन करके अन्न ग्रहण करना चाहिए और भोजन करने के पश्चात् भी भलीभाँति आचमन करना चाहिए। जलों से शिर के छिद्रों को स्पर्श करना चाहिए-

उपस्पृश्य द्विजो नित्यमन्नमद्यात्समाहितः।

भुक्त्वा चोपस्पृशेत्सम्यगद्भिः खानि च संस्पृशेत्।।

ब्रह्मचारी को सदा भोजन का सत्कार करना चाहिए और इस अन्न की निन्दा को त्यागकर भक्षण करना करना चाहिए। अन्न देखकर प्रसन्नचित्त तथा सन्तुष्ट रहना चाहिए।उसे यह उच्चारण (प्रार्थना) करना चाहिए कि यह अन्न प्रतिदिन मिले-

पूजयेदशनं नित्यमद्याच्चैतदकुत्सयन्।

दृष्ट्वा हृष्येत्प्रसीदेच्च प्रतिनन्देच्च सर्वशः।।

सदा पूजित किया हुआ अन्न बल और वीर्य को देता है और बिना पूजन किया किया हुआ वह अन्न खाने से इन बल और वीर्य का नाश करता है-

पूजितं ह्यशनं नित्यं बलमूर्जं च यच्छति।

अपूजितं तु तद्भुक्तमुभयं नाशयेदिदम्।।

ब्रह्मचारी को चाहिए कि किसी को भी जूठा भोजन नहीं दे और दूसरे का उच्छिष्ट नहीं खाए। ब्रह्मचारी को बहुत भोजन भी नहीं करना चाहिए तथा जूठे मुँह कहीं नहीं जाना चाहिए-

नोच्छिष्टं कस्यचिद्दद्यान्नाद्याच्चैव तथान्तरा।

न चैवात्यशनं कुर्यान्न चोच्छिष्टः क्वचिद्व्रजेत्।।

अधिक भोजन करना आरोग्यता का नाश, आयु का नाश, स्वर्ग का नाश, पुण्य का नाश करता है तथा संसार में निन्दा का कारण होता है। अतः अतिभोजन का त्याग कर देना चाहिए-

अनारोग्यमनायुष्यमस्वर्ग्यं चातिभोजनम्।

अपुण्यं लोकविद्विष्टं तस्मात्तत्परिवर्जयेत्।।

ब्रह्मचारी को मृत्तिका आदि से शरीर शुद्धि रूप शौचक्रिया, स्नानादि करके, हवन-सन्ध्योपासना कर स्वच्छ-धवल वस्त्र धारण करके ब्रह्माञ्जलिपूर्वक वेदाध्ययन के लिए गुरु की सेवा में बैठना चाहिए। वेदपाठ प्रारम्भ करते समय और वेद पाठोपरान्त ब्रह्मचारी जब दोनों हाथों से गुरु के चरण-स्पर्श करता है और सदैव हाथ जोड़कर बैठे हुए वेदाध्ययन करता है, उसको ब्रह्माञ्जलि कहते हैं। वेदाध्ययन करने वाले ब्रह्मचारी को पूर्वाभिमुखी कुशासन पर बैठकर दोनों हाथों से कुशाग्रहण कर पवित्र हो, तीन प्राणायाम कर

पवित्र होने के पश्चात् वेदाध्ययन के निमित्त ॐ का उच्चारण करके स्वाध्याय का आरम्भ करना चाहिए। ॐकार अविनाशी, परमब्रह्म तथा प्रजापति का स्वरूप है।

ब्रह्मचारियों को चाहिए कि वे इन्द्रियों का संयमन करें। इन्द्रियों का संयमन सिद्धि का हेतु होता है। वस्तुतः विषयों के उपभोग से इच्छा कभी भी शान्त नहीं होती। जिस प्रकार घी से अग्नि प्रज्वलित होती है, इसी प्रकार विषयों के भोग से इच्छा भी बढ़ती जाती है क्योंकि भोगी पुरुष में प्रतिदिन अधिकाधिक भोगों की इच्छा प्रबल हो जाती है-

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।

हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते।।

कामनाओं को पाकर उनका भोग करने की अपेक्षा उनको त्याग देना श्रेष्ठ होता है। वस्तुतः त्यागी मनुष्य ही श्रेष्ठ है। विषयों में अभिलाषी मनुष्य को विषयों को एकत्रित करने और विपत्ति में क्लेश होता है जबकि विषयों के त्यागी को यह क्लेश नहीं होता, अतः विषयों का त्याग ही सर्वोत्तम है-

यश्चैतान्प्राप्नुयात्सर्वान्यश्चैतान्केवलांस्त्यजेत्।

प्रापणात्सर्वकामानां परित्यागो विशिष्यते।।

जितेन्द्रिय कौन है, इसका उल्लेख मनुस्मृति में किया गया है कि जो मनुष्य सुनकर, छूकर, देखकर, खाकर तथा सूँघकर न प्रसन्न हो न ग्लानि करे वह मनुष्य जितेन्द्रिय होता है-

श्रुत्वा स्पृष्ट्वा च दृष्ट्वा च भुक्त्वा घ्रात्वा च यो नरः।

न हृष्यति ग्लायति वा स विज्ञेयो जितेन्द्रियः।।

इन्द्रियों का संयम ही सभी पुरुषार्थों का हेतु है। सभी बाह्य इन्द्रियों को अपने वशीभूत करके और मन को भी अपने अधीन करके अपने शरीर को पीड़ा नहीं देते हुए मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि करनी चाहिए।

ब्रह्मचारी को चाहिए कि वह शरीर, वाणी एवं बुद्धि, इन्द्रिय और मन को रोककर, गुरु के मुख को देखता हुआ हाथ जोड़कर सम्मुख खड़ा रहे-

शरीरं चैवं वाचं च बुद्धीन्द्रियमनांसि च।

नियम्य प्राञ्जलिस्तिष्ठेद्वीक्षमाणो गुरोर्मुखम्।।

जिस स्थान में गुरु के विद्यमान अथवा अविद्यमान दोषों का कथन अथवा निन्दा होता हो, उस स्थान में बैठा हुआ ब्रह्मचारी शिष्य हाथों से अपने कानों को बन्द कर ले अथवा उस स्थान से दूसरे स्थान को चला जाए। तात्पर्य यह है कि गुरु के परिवाद और निन्दा को किसी प्रकार न सुने-

गुरोर्यत्र परीवादो निन्दावाऽपि प्रवर्तते।

कर्णौ तत्र पिधातव्यौ गन्तव्यं वा ततोऽन्यतः।।

ब्रह्मचारी शिष्य गुरु के परीवाद से गधा होता है, निन्दा करने वाला कुत्ता होता है, गुरु के अनुचित धन को खाने वाला कृमि होता है, मत्सरता करने वाला कीट होता है-

परीवादात्खरो भवति श्वा वै भवति निन्दकः।

परिभोक्ता कृमिर्भवति कीटो भवति मत्सरी।।

ब्रह्मचारी को चाहिए कि जिन व्यक्तियों ने गुरु पढ़ाया है अथवा जो गुरु के माता-पिता इत्यादि है, उनका भी यथायोग्य गुरु के समान ही सम्मान करना चाहिए-

गुरोर्गुरौ सन्निहिते गुरुवद्वृत्तिमाचरेत्।

न चातिसृष्टो गुरुणा स्वान्गुरुनभिवादयेत्।।

विद्या और तप में जो वृद्ध हों उनमें, श्रेष्ठ गुरु के पुत्रों में और गुरु के पितृत्व आदि बन्धुओं में गुरु के तुल्य नमस्कार आदि का व्यवहार करना चाहिए-

श्रेयस्सु गुरुवद्वृत्तिं नित्यमेव समाचरेत्।

गुरुपुत्रेषु चार्येषु गुरोश्चैव स्वबन्धुषु।।

ब्रह्मचारी को सदा गुरु की सेवा करनी चाहिए। कहा गया है कि जिस प्रकार मनुष्य कुदाल से पृथिवी को खोदता हुआ जल को प्राप्त होता है, उसी प्रकार गुरु की सेवा करने की इच्छा वाला शिष्य गुरु की विद्या को प्राप्त हो जाता है-

यथा खनन्खनित्रेण नरो वार्यधिगच्छति।

तथा गुरुगतां विद्यां शुश्रूषुरधिगच्छति।।

यदि गुरुकुल अथवा आश्रम में ब्रह्मचारी अपनी इच्छा से सोता रहे और कभी सूर्य उदय हो जाए या उसके सोते-सोते ही अस्त हो जाए तो गायत्री को जपता हुआ एक दिन उपवास करें अर्थात् केवल रात्रि में भोजन करें। यदि ब्रह्मचारी सूर्य के अस्त या उदय होने के समय में सोता रहता है और प्रायश्चित नहीं करता है, वह ब्रह्मचारी महान् पाप से युक्त होता है और नरक में जाता है, अतः शास्त्रोक्त प्रायश्चित अवश्य करना चाहिए-

सूर्येण ह्यभिनिर्मुक्तः शयानोऽभ्युदितश्च यः।

प्रायश्चित्तमकुर्वाणो युक्तः स्यान्महतैनसा।।

ब्रह्मचारी को सावधान होकर एकाग्रचित्त से पवित्र हो आचमन कर पवित्र स्थान में स्थित हो गायत्री का जप करते हुए शास्त्रोक्त विधि से दोनों सन्ध्याओं की उपासना करनी चाहिए-

आचम्य प्रयतो नित्यमुभे सन्ध्ये समाहितः।

शुचौ देशे जपञ्जप्यमुपासीत यथाविधिः।।

ब्रह्मचारी को चाहिए कि आचार्य, पिता, माता एवं बड़ा भाई द्वारा अपमान पीड़ित होकर भी पुरुष इनका अपमान न करे। ब्रह्मचारी को समझना चाहिए कि आचार्य परब्रह्म की मूर्ति हैं, पिता ब्रह्मा की मूर्ति हैं, माता पृथिवी की मूर्ति हैं और भाई अपने आत्मा की मूर्ति हैं,-

आचार्यो ब्रह्मणो मूर्तिः पिता मूर्तिः प्रजापतेः।

माता पृथिव्या मूर्तिस्तु भ्राता स्वो मूर्तिरात्मनः।।

ब्रह्मचारी को माता-पिता और आचार्य की प्रीति को निरन्तर उत्पन्न करें क्योंकि इन तीनों की प्रसन्नता होने पर सम्पूर्ण तप का फल प्राप्त होता है-

तयोर्नित्यं प्रियं कुर्यादाचार्यस्य सर्वदा।

तेष्वेव त्रिषु तुष्टेषु तपः सर्वं समाप्यते।।

माता, पिता, गुरु इन तीनों की सेवा करना ही परम तप कहा है, अतः इनकी आज्ञा के बिना किसी दूसरे धर्म का आचरण नहीं करना चाहिए-

तेषां त्रयाणां शुश्रूषा परमं तप उच्यते।

न तैरभ्यननुज्ञातो धर्ममन्यं समाचरेत्।।

माता की भक्ति करने से ब्रह्मचारी इस लोक को, पिता की भक्ति करने से मध्य (अन्तरिक्ष) लोक को और गुरु की सेवा करने से ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है-

इमं लोकं मातृभक्त्या पितृभक्त्या तु मध्यमम्।

गुरुशुश्रूषया त्वेवं ब्रह्मलोकं समश्नुते।।

जिस मनुष्य ने माता, पिता, आचार्य इन तीनों का आदर किया उसके सब धर्म सफल होते हैं और जिसने इनका आदर नहीं किया उसकी सब क्रियाएं निष्फल हो जाती है-

सर्वे तस्यादृता धर्मा यस्यैते त्रय आदृताः।

अनादृतास्तु यस्यैते सर्वास्तस्याफलाः क्रियाः।।

यदि कोई ब्रह्मचारी गुरु के कुल में बहुत काल तक रहने की इच्छा हो तो जब तक गुरुजी जीवित रहें तब तक गुरु की सेवा करता रहें। गुरु के शरीर छूटने पर्यन्त जो ब्रह्मचारी गुरु की सेवा करता है वह ब्रह्मा के नित्य पद को प्राप्त होता है अर्थात् ब्रह्म में लीन हो जाता है-

आसमाप्तेः शरीरस्य यस्तु शुश्रुषते गुरुम्।

स गच्छत्यञ्जसा विप्रो ब्रह्मणः सद्म शाश्वतम्।।

ब्रह्मचारी को चाहिए कि वह भूमि, सुवर्णद्रव्य आदि, गौ, घोड़ा, छत्री और जूते, आसन, धान्य, शाक, वस्त्र, यह सब वस्तु गुरु को देकर प्रसन्नता प्राप्त करवाना चाहिए-

क्षेत्रं हिरण्यं गामश्वं छत्रोपानहमासनम्।

धान्यं शाक च वासांसि गुरवे प्रीतिमावहेत्।।